आंसू बन गए फूल

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

नव-साक्षरों के लिए

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

के

अन्य प्रकाशन

१.	सपना—अ. अ. अनन्त	2.00
२.	नरक और स्वर्ग—डॉ. गणेश खरे ...	2.00
३.	सुख कहां ?—बिमला दत्ता ...	2.00
४.	मरजाद—डॉ. सतीश दुबे ...	1.50
५.	आग और पानी—डॉ. प्रभाकर माचवे ...	2.50
६.	रधिया लौट आई—कमला रत्नम् ...	3.00
७.	जीवन की शिक्षा [लोक कथायें]—नारायणलाल परमार	2.50
८.	नई जिन्दगी—डॉ. गणेश खरे ...	3.50
९.	मेरे खेत में गाय किसने हांकी ?—जोगेन्द्र सक्सेना	2.50
१०.	बिटिया का गीत—शिव गोविन्द त्रिपाठी ...	3.00
११.	एक रात की बात—इन्दु जैन ...	4.00
१२.	कल्याण जी बदल गए—अ. अ. अनन्त ...	3.00
१३.	समाज का अभिशाप—ब्रह्म प्रकाश गुप्त ...	2.50
१४.	बढ़ते कदम—विमला लाल तथा शहर का पत्र गांव के नाम —डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'	3.00
१५.	भीड़ से घिरे चेहरे—डॉ. महीप सिंह ...	2.00

प्राप्ति स्थान

17-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग, नई दिल्ली-110002

आंसू बनगए फूल

विमला लाल

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नई दिल्ली

प्रकाशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग,
नई दिल्ली-110002

मूल्य : 1 रुपया 50 पैसे

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
की आर्थिक सहायता से
प्रकाशित

सम्पादन
डॉ० सुशील गौतम

पुस्तक शृंखला संख्या : 130

मुद्रक
रणजीत प्रेस,
301, दरीबा कलां,
दिल्ली-110006

प्रस्तावना

प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में साक्षर बन जाना कोई इतना कठिन कार्य नहीं, जितना कठिन कार्य उस साक्षरता के ज्ञान को बनाये रखना है। साक्षरता के साथ अपने आप को जोड़े रखने के लिए नवसाक्षरों को अपनी रुचि के अनुसार साहित्य नहीं मिलता। नतीजा यह निकलता है कि वे लोग, प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्रों में जो कुछ सीख कर आते हैं, अनुवर्ती साहित्य के अभाव के कारण, सब कुछ भूल जाते हैं। भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ इस दिशा में पहले से ही प्रयास करता आ रहा है। पिछले वर्ष इसने नव-साक्षरों के लिए दस पुस्तकें प्रकाशित की थीं। इस वर्ष भी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ इसी साहित्य-माला के अन्तर्गत पांच पुस्तकें प्रकाशित कर रहा है, जो उसके पहले प्रयास की दूसरी कड़ी है। यह प्रयास इस प्रकार के साहित्य के अभाव की पूर्ति के लिए एक ठोस कदम है। इन पांचों पुस्तकों में लेखकों ने जीवन की समस्याओं को अपनी सरल भाषा में प्रकट किया है। इन्हें पढ़कर नव-साक्षरों में न केवल अक्षर-ज्ञान को बराबर बनाये रखने की भावना बनी रहेगी, बल्कि अपनी कार्य-क्षमता को बढ़ाने और सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना को ग्रहण करने का भी उनमें उत्साह पैदा होगा। अतः ये पांचों रोचक रचनाएं नव-साक्षर भाई-बहिनों का मन तो बहलायेंगी ही, साथ ही उनके जीवन के व्यावहारिक पक्ष में अपनी उपयोगिता भी साबित करने में सफल होंगी। क्योंकि इनमें उन्हीं बातों का वर्णन किया गया है, जो उनके दैनिक जीवन के कई पक्षों से जुड़ी हुई हैं। ये सभी रचनाएं 'राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम' के अन्तर्गत ही प्रकाशित की गयी हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, प्रौढ़ शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में अपने कर्त्तव्य का पालन करता आ रहा है। अपनी इन्हीं महान् परम्पराओं के

अनुसार इसने नव-साक्षर भाई-बहिनों के लिए अनुवर्ती साहित्य तैयार करने के वास्ते इन्दौर में 6 मई से 9 मई 1979 तक एक "लेखक कार्यशाला" का आयोजन किया। इस कार्यशाला का विधिवत् उद्घाटन विक्रम विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति तथा हिन्दी के प्रख्यात कवि डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने किया। इसके समापन समारोह की अध्यक्षता, इन्दौर विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० देवेन्द्र शर्मा ने की।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय का बहुत आभारी है कि उसने इस कार्यशाला के आयोजन और पुस्तकों के प्रकाशन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की।

संघ उन सभी व्यक्तियों और संस्थाओं का भी आभारी है, जिन्होंने इस कार्यशाला की सफलता में अपना पूरा-पूरा सहयोग दिया।

आशा है, पाठकों को ये रचनाएं अवश्य ही पसन्द आयेंगी।

"शफ़ीक़ मेमोरियल"
17-बी, इन्द्रप्रस्थ मार्ग
नई दिल्ली-110002

29 फरवरी, 1980

वी० एस० माथुर
अवैतनिक महासचिव
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

"आंसू बन गए फूल"

एक

"बहू गोपाल अभी तक नहीं लौटा न" रामधन ने चौपाल से लौटकर अपनी बहू सोना को आवाज़ दी। सोना घर के भीतर दीवार से लगी कच्ची जमीन पर औसियां डालने में लीन थी। शायद पति के लौटने का वक्त जानने का वही सबसे आसान तरीका उसके पास था।

बापू की आवाज़ सुन उसने सिर का कपड़ा थोड़ा और आगे खींचा और किवाड़ तक आई। और कहा "नहीं बापू— आवत ही होंगे। तुम सोओ जाकर। मैं तो जागत ही हूं।"

"हां तू तो जागेगी ही" कहकर गोपाल के बापू ने एक ठंडी सांस खींची और हाथ में पकड़ी पगड़ी को एक तरफ रख, खाट पर लेट गया। फिर धीरे से बोला जैसे अपने आप से ही कह रहा हो—"किस बुरी साइत में इसे शहर भेजो था नौकरी करने कू। इससे तो खेत पर रहतो तो चोखो होतो।" बूढ़े हाड़ों हड्डियों का सहारा तो बनतो। घर में जवान महरिया है और रात-रात भर बाहर डोल तो फिरे है।"

सोना किवाड़ के साथ लगी सुनती रही। बोली कुछ भी नहीं। उसने चुपचाप आधा किवाड़ भिड़ाया और भीतर चली गई। वह जानती थी, जो कुछ बापू इस वक्त कह रहे हैं गोपाल के आने पर कभी नहीं कह सकेंगे। वह तो उससे इतना भी नहीं पूछ सकते कि वह इत्ती रात तक कहां रहा।

उसने दिए को उठाकर ताक पर रख दिया और खाट के साथ सिर टिका पति की बाट जोहने लगी।

रात के बढ़ते अंधेरे के साथ-साथ सोना के दिल का अंधेरा भी बढ़ता जाता था। उसका पति गोपाल शहर में नौकरी करता था। सुबह की गाड़ी से जाता था और शाम की गाड़ी से घर लौटता था। शाम को अक्सर वह आखिरी गाड़ी से आता था। सोना समझ नहीं पाती थी कि उसके पति की यह कैसी नौकरी है जो उसे गई रात तक घर नहीं लौटने देती। गांव के और भी दो-तीन छोकरे शहर जाते थे। वे तो शाम ढले ही आ जाते थे। पर उसकी आधी से अधिक रातें तो पति की इन्तजार में बैठे-बैठे ही कट जाती थीं।

सोना इसी उधेड़-बुन में पड़ी थी कि बूट की ठोकर से भिड़ा हुआ किवाड़ चरमरा उठा और चों-चों की आवाज़ कर जोर से दीवार से जा टकराया। सोना हड़बड़ा कर सिर से उतरा धोती का पल्ला संभालने लगी। जब तक वह उठी गोपाल सहन में पहुंच गया। सोना को उठते देख बोला—"अच्छा तो महारानी जी सो रही थीं। किवाड़ भी खुला छोड़ रखा था, घर का कुछ होश भी है तुझे या हर समय सोने का ही काम है।" "पति की बात सुन सोना का हाथ एकदम अपनी आंखों पर चला गया जैसे वह देखना चाहती हो कि क्या वह सचमुच सो रही थी ? फिर बोली—

"नहीं मैं तो जग रही थी। बाहर बापू भी तो सो रहे हैं।"

"हां-हां बापू तेरा चौकीदार है न !"

"नहीं मैंने तो ऐसा नहीं कहा।" सोना ने धीरे से कहा और एक ओर हट गई। वह समझ गई थी कि गोपाल बिगड़ने का बहाना ढूंढने लगा है।

असल में गोपाल जब-जब देर से लौटता कोई-न-कोई बहाना बना, बिगड़ने लगता था और उससे कोई भी न पूछता कि वह इतनी देर तक कहां रहा। सोना चुपचाप आंखों में आये आंसुओं को अंदर ही अंदर गटक गई और रसोईघर में जाकर थाली उठा गोपाल के लिए रोटी परोसने लगी। आज उसने बड़े चाव से चौलाई का साग और पकौड़ी बनाई थीं। गोपाल ने जैसे ही साग की कटोरी को देखा थाली को ऐसा झटका दिया कि थाली सोना के हाथ से छूट कर

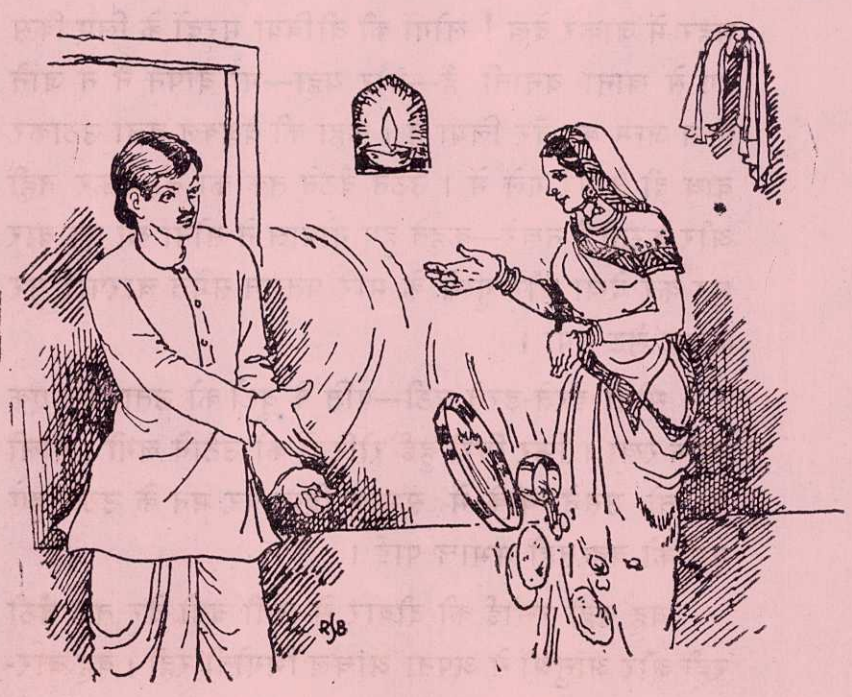

दीवार से जा टकराई। गोपाल और थाली की मिली-जुली आवाज़ से सोना का सिर झनझना उठा। वह सर थामकर वहीं बैठ गई। उसने सुना गोपाल कह रहा था—

"यह तिरिया चरित्र किसे दिखा रही है—चल उठ—उठा थाली और खिला दे अपने बाप को यह साग।"

साली को रोज़-रोज़ साग ही मिलता है बनाने को। गांव में दूसरी चीज़ों का अकाल ही पड़ गया है जैसे! जब देखो तभी साग। वह धीरे-धीरे बुदबुदाया। वह भूल गया था कि खेत से ताज़ा लाया गया साग होटल के बने मुर्गे से कहीं ताकतवर और स्वादिष्ट होता है। सोना अभी भी उसी तरह बैठी थी। उसे उठती न देख वह फिर ज़ोर से चिल्लाया "अब उठेगी भी या लगाऊं एक ठोकर। सारा दिन खटके घर आओ। आकर देखो तो ढंग का खाना भी नसीब नहीं है। शहर में जाकर देख! लोगों की बीवियां मरदों के लिए किस ढंग से खाना बनाती हैं—और यहां—मां बापन ने न जाने किस जन्म का बैर लिया है। कहां की बेअक्ल बला उठाकर बांध दी है मेरे गले में। उठने बैठने तक का तो शऊर नहीं और करती है नखरे—कहते हुए गोपाल ने सोना को एक बार घूर कर देखा और गुस्से के मारे पतलून समेत चारपाई पर जाकर लेट गया।

सोना डरते-डरते उठी—पति के बूटों को उतारकर एक तरफ रखा। फिर गिरी हुई रोटियों को उठाने लगी। थाली को तो उसने चौके में संभाल दिया पर मन के उठते हुए धुएं को वह नहीं संभाल पाई।

वह वहीं रसोई की दीवार से लगी बड़ी देर तक बैठी रही और आंसुओं से अपना आंचल भिगोती रही। वह बार-

बार सोचती उसने क्या पाप किया है ? गांव में दूसरी सब्ज़ी नहीं मिलती तो इसमें इसका क्या दोष है। उसे समझ ही नहीं आता था कि उसमें क्या कमी है जो उसका पति इस तरह उसे लताड़ता रहता है। उसे बार-बार विचार आता कि मुझसे अच्छी तो वह कूनों ही है। एक आंख में दोष है पर उसका पति कितने लाड़ से बतियाता है उससे। खेत से आते वक्त रोज कुछ-न-कुछ ले ही आता है उसके लिए—

पर एक वह है—जिसे कभी किसी ने यह भी नहीं पूछा कि तू भूखी है या प्यासी। उसे याद आया उसकी सखियां कहा करती थीं "बड़ा नसीब वाला होगा जो इस चांद को ले जाएगा।" ले जाने वाले का नसीब क्या है यह तो वह नहीं जानती पर उसका अपना नसीब क्या है यह वह अच्छी तरह जान गई थी।

यही सब सोचते-सोचते उसी दीवार के साथ लगी-लगी न जाने कब सो गई यह वह जान न पाई। □

दो

सोना का पति गोपाल अपने पिता रामधन का इकलौता बेटा था। उसके बापू को बड़ा शौक था अपने बेटे को बाबू बनाने का। इसलिए जब गोपाल ने गांव के स्कूल से आठवीं पास कर ली तो उसके बापू ने उसे आगे पढ़ने के लिए उसके मामा के पास भेज दिया। रामधन के पास चार बीघे ज़मीन थी और वह अकेला उस पर मेहनत करता। घर का खर्चा कुछ ज्यादा नहीं था। वह बड़ी आसानी से गोपाल को शहर की पढ़ाई का खर्चा भेजता रहा।

दसवीं पास करने पर मामा की सिफारिश से ही उसे शहर के दफ्तर में नौकरी मिल गई। गोपाल का बापू फूला न समाया। उसकी पगड़ी का तुर्रा ज़रा ऊंचा हो गया और अब वह छाती फुलाकर पंचायत में बैठने लगा।

गोपाल रोज गाड़ी से शहर जाता और शाम की गाड़ी से लौट आता। पर थोड़े ही दिनों में शहर की चटक-मटक ने गोपाल को ऐसा खींचा कि गाँव की हर चीज़ उसे भद्दी दिखाई देने लगी। घर लौटने को उसका दिल ही न करता। शहर की चमचमाती रोशनियां छोड़ जब वह घर लौटता तो टिमटिमाते हुए दिए के आगे उसका दम घुटने लगता। मिट्टी से लिपा-पुता घर उसे चिपचिपाता लगने लगा। घर बंधे ढोरों की बदबू उसके शरीर में लगे इतर की खुशबू को ढक लेती।

नतीजा यह हुआ कि गोपाल का घर आने का समय बदलने लगा। वह पहली गाड़ी छोड़ दूसरी गाड़ी पकड़ने लगा और कुछ ही दिन बाद तीसरी गाड़ी की बारी आ गई जो रात दस बजे आती थी। बैटरी का रेडियो गोपाल ने खरीद लिया। घर आता तो वह उसे खोल कर बैठ जाता।

यार लोगों की बातचीत उसे भद्दी लगने लगी। गोपाल का बापू देखता, समझाता पर वह कुछ कह न पाता, एक-आध बार उसे समझाने की कोशिश भी की पर गोपाल ने उसे समझा दिया कि दफ्तर में काम अधिक होने के कारण उसे रुकना ही पड़ता है।

पर रामधन के कान बन्द नहीं थे। शहर आने-जाने वालों से उसे खबरें मिलती रहती थीं। गोपाल की मटरगश्ती

की कहानियां गांव में नमक-मिर्च लगाकर सुनाई जातीं। रामधन ने इसका इलाज जल्दी ढूंढ निकाला। उसने सोचा गोपाल के पैरों में यदि शादी की बेड़ियां डाल दी जाएं तो वह अपने आप कुछ ही दिनों में संभल जाएगा।

गोपाल ने शादी की बात सुनी तो ज़रा हिचकिचाया। वह चाहता था कि बापू से कह दे कि वह शादी शहर में ही

करेगा पर बहुत चाहने पर भी बापू के सामने वह मुंह खोल नहीं सका।

रामधन ने पास के ही गांव शामपुर के चौधरी की बेटी सोना के साथ उसका ब्याह रचा दिया। सोना जैसी गुड़िया सी, गोरी चिट्टी, मोटी-मोटी आंखो वाली बहू पाकर गोपाल की अम्मा अपने को धन्य मानने लगी। गोपाल के

बापू को भी विश्वास हो गया कि इतनी सुन्दर बहू पाकर गोपाल घर से ही बंध जाएगा। पर पहले ही दिन जब गोपाल ने अपने शहर के दोस्तों को सोना के सामने ला खड़ा किया और उनके सामने ही उसका घूंघठ उघाड़ने लगा तो सोना का सिर लाज के मारे धरती को छू गया। उसके हाथ पांव फूलने लगे। वह किसी तरह पति का हाथ छुड़ा, भाग कर अन्दर अम्मा की गोदी में जा छिपी। इसके बाद बहुत दिन तक वह गोपाल के सामने नहीं आ सकी। वह दिन भर अम्मा के साथ-साथ लगी रहती जैसे अम्मा की छाया छूटते ही उसका सब कुछ छिन जाने वाला हो।

इधर गोपाल के दोस्तों ने उसका खूब मज़ाक उड़ाया। गोपाल आग-बबूला हो उठा। घर में तूफान खड़ा कर दिया उसने। उसकी अम्मा ने उसे समझाने की बहुत कोशिश की। उसे एक तरफ ले जाकर कहा "बिटुआ बिगड़त नाहीं। बहू अभी बच्ची है। धीरे-धीरे सब जान जाएगी। फिर तुम जानो गोपाल गाँव का चलन ऐसा तो नाहीं। भले घर की महरिया पराए मरदों के आगे मुंह नहीं उघाड़त।"

"तो मैं क्या करूं तुम्हारे गांव के चलन को। मित्रों में तो इसने मेरी आबरू ही उतार कर रख दी। पता है तुम्हें उन्होंने मेरा कैसा मज़ाक उड़ाया।"

मां तुम नहीं समझोगी। रंग को लेकर चाटूं क्या ? ज़रा सा भी इसे सलीका होता तो यह ऐसा करती। गांव की अनपढ़ गंवार छोरियों में और शहर की पढ़ी-लिखी लड़कियों में यही फरक होता है। गोपाल ऐसे बोला जैसे कहीं बाज़ी हार कर आया हो। मां के पास इस बात का कोई जवाब नहीं था। बहू सुन्दर हो—इससे परे भी कुछ है, यह उसकी समझ से बाहर की बात थी। गोपाल के मन में पड़ी गाँठ धीरे-धीरे मजबूत होने लगी और वह सोना से खिचा-खिचा रहने लगा।

सोना का दुल्हन का रूप जल्दी ही खत्म हो गया। वह घर की बहू बन गई। उसने धीरे-धीरे घर का सारा भार संभाल लिया। घर का लीपना-पोतना, ढोरों को चारा देना, अनाज संभालना आदि सभी काम उसने अपने ऊपर ले लिये। सुबह सास से पहले ही वह उठ जाती। डंगरों को चारा देती और सास के जगने तक घर का बाहरी हिस्सा झाड़ बुहार लेती। जब तक उसके ससुर खेत का चक्कर लगाकर आते वह उनके लिए कुछ छाछ मक्खन तैयार कर देती। वह कोशिश करती कि उसकी सास को कम से कम काम करना पड़े। गोपाल तो घर सिर्फ कलेवा ही लेता था। दोपहर का खाना तो वह दफ्तर की कैन्टीन में ही खाता था। कैन्टीन के बने भटूरे उसे घर के खाने से कहीं अधिक मज़ेदार लगते।

सोना जितना अधिक सुघड़ गृहणी बनने की कोशिश करती, पत्नी के पद से वह उतनी ही दूर होती जाती थी।

सोना इसे अपनी तकदीर समझ इस घोर अपमान को झेलने लगी। □

तीन

आज सोना बड़े बेमन से उठी। एक नजर उसने पति पर डाली और धीरे से उठ कर, काम में लग गई।

सोना घर का आंगन लीप कर उठने ही लगी थी कि पीछे से किसी ने उसकी आंखें मूंद ली। सोना समझ गई बिंदा होगी। उसने धीरे से उसके हाथ हटाते हुए कहा—"हाथ हटा लो बिंदा। मैं जानत हूं इस बेला बिंदा के सिवा और कोई नहीं आ सकता।"

"अच्छा तो भौजी समझती है बिंदा घर से फालतू है" कहते हुए बिंदा घूमकर सोना के सामने आ गई। "अरे नहीं री बिंदा। तू तो बिगड़ने लगी। तैने ही तो बांध रखा है मुझे इस गांव में। भला सोच तो! तेरे सिवा मेरा कौन है यहां" कहते-कहते सोना की आंखें भर आईं।"

बिंदा सोना के दुःख को समझती थी। उसने सोना के आंसुओं को देख कर भी अनदेखा कर दिया था। वह नहीं चाहती थी कि सुबह ही सुबह सोना का मन उदास करे।

उसने हँसते हुए कहा "चल हट भौजी बात बनाना तो कोई तुझसे सीखे और उसने दीवार से लगी खाट को खट से खींचा और धम से उस पर बैठ गई। खटिया चरमरा उठी। सोना ने पीछे मुड़ कर देखा और हँसकर बोली "ए री बिंदा—खटिया को भी भौजी मान लिया है क्या ?

और दोनों हँसने लगीं। बिंदा यही तो चाहती थी। वह सोना के फूली-फूली आंखें देख चुकी थी।

सोना और बिंदा में प्रेम भी बहुत था। सोना रामपुर गांव की बहू थी और बिंदा बेटी। इस नाते दोनों ननद-भौजी का रिश्ता मानती थीं। बिंदा सोना के ब्याह से पहले भी इस घर में आती जाती थी। दोनों परिवारों में लेन-देन था। घरों की छतें भी सांझी थीं। जब से सोना ब्याह कर इस घर में आई बिंदा वक्त-बेवक्त उसके पास आने लगी। दोनों का प्रेम बढ़ता गया। जो काम करतीं दोनों मिलकर ही करतीं।

पिछले सावन में बिंदा का भी ब्याह हो गया था। बिंदा की ससुराल तो गांव में थी पर उसका पति शहर में किताबों की दुकान करता था। बिंदा के गौने के बाद वह उसे शहर अपने साथ ही ले गया। दुकान के पास ही उसने एक कमरा किराए पर ले रखा था। कमरा था तो छोटा सा पर बड़ा हवादार और साफ सुथरा था। बिंदा वहीं जाकर रहने लगी।

बिन्दा का सुसराली-गांव शहर से काफी दूर था। वहां बिन्दा के पति राम मोहन का जाना जल्दी-जल्दी नहीं हो पाता था लेकिन बिन्दा को तो वह उसके मां बाप से मिलने उसके गांव भेजता ही रहता था।

पहले पहल तो राम मोहन खुद बिन्दा को उसके गांव पहुंचाने जाया करता था। बाद में लेने भी आता था। पर इस आने जाने में उसे दुकान पर नुकसान उठाना पड़ता था। धीरे-धीरे उसने बिन्दा को अकेली जाने की आदत डाल दी। जब भी वह गांव जाना चाहती राममोहन उसे बस में बिठा देता और वापसी के दिन बस अड्डे पर से उसे

बस से उतार लेता। इससे उसके वक्त और पैसे—दोनों की बचत होने लगी।

शुरू में जब उसने बिन्दा को अकेली गांव भेजा तो खूब हंगामा हुआ। बिन्दा की हमझोलियों ने भी दांत तले अंगुली दबा कर बिन्दा को देखा। वह एक दूसरे के कान से मुंह लगाकर कहतीं "ए री देख बिन्दा शहर से इकली आई है।" दूसरी ने हां में हां मिला कर कहा "हां री यह तो इसी की हिम्मत है। मैं तो लाज से मर ही जाती।"

बिन्दा के बापू भी बहुत नाराज हुए थे। पर धीरे-धीरे वह समझ गये थे कि इस तरह बेकार के आने जाने में उनके दामाद का कितना नुकसान होता है। बिन्दा ने भी उन्हें समझा दिया था कि इस तरह बस में अकेली आने से उसे किसी तरह की भी तकलीफ नहीं होती।

इस बार भी वह अकेली आई थी। अगले हफ्ते उसका पति आने वाला था और फिर यहां से दोनों को अपने गांव जाना था। □

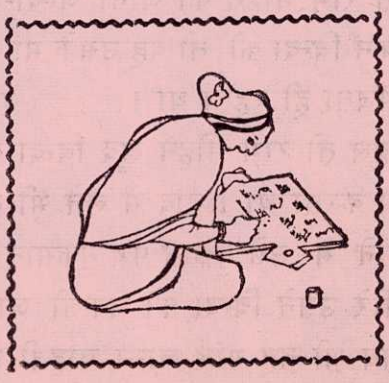

चार

सोना ने जल्दी जल्दी हाथ का काम निपटाया और गोबर का तसला एक ओर हटा दिया। गोबर के सने हाथ धोकर सोना ने बिन्दा का हाथ पकड़ा और रसोईघर-की ओर चल दी। उसने बिन्दा को रसोई की दहलीज़ में ही पीढ़ा डाल दिया और खुद चूल्हा लीपने के लिए चूल्हे से राख निकालने लगी। सोना को चूल्हा लीपते देख बिन्दा बोली "यह का भौजी तू तो भोर ही चौका लीप लेती थी आज यह कुबेर काहे कर दी।"

सोना का हाथ एक क्षण को रुका फिर कुछ बेमन से ही बोली "हां आं कुछ कुबेर हो गई। रात कुछ मन ठीक नहीं था। अम्मा तो कल से अपने भाई के इहां गई हैं। दिए जले तक ही लौटने की बात है और बापू मुंह अंधेरे खेत पर चले जाते हैं। खान-पान का धंधा करती तो किसके लिए। फिर आज तो रात की रोटियां भी यूं की यूं ही धरी रक्खी हैं। सोचा था तेरा भाई जाग जाए तो चूल्हा जलाऊं।"

"तो क्या भाई अभी तक सो रहा है। रात फिर देर से आया था क्या ?"

सोना की आंखों में फिर उदासी घिर आई और धीरे से बोली "तुम जानो बीवी देर तो हो ही जावे है। शहर की नौकरी ठहरी। दसों सू वास्ता पड़े है।"

"बस भौजी बस" बिन्दा ने उसे बीच ही टोक दिया। वह सब मैं जानती हूं" तू यही तो कहेगी न कि तेरे पति बेचारे को सारा दिन खटना पड़ता है। साहब लोगों का काम करना पड़ता है। शाम को जब घर लौटता है तो,

इतना थक जाता है कि भूख नदारद—और तू तो ठहरी एक पतिव्रता नारी। पति को भूख नहीं लगी तो तोहे काहे को लगेगी।" बिन्दा ने मुंह बिचका कर कहा। सोना मुंह नीचे किए बैठी रही। बिन्दा को और गुस्सा आ गया। वह ज़रा ज़ोर से बोली—"देख भाभी तू मुझे बुद्धू बनाने की कोशिश मत कर। रात मैं भी भाई की आवाज़ सुन रही थी। थाली गिरने की आवाज़ भी मैंने सुनी थी। फिर कुछ सोचकर सोना का हाथ पकड़ कर बोली—"अच्छा भौजी सच बता यह जो तू अन्दर ही अन्दर जल रही है वह क्या तेरे तक ही है—मैं क्या तेरी बहिन फ्लोकट में ही हूं। मैं पूछती हूं भौजी! भाई का पेट तो फिल्मों में नाचती छोकरियों को देखकर भर जाता है, पर तेरा काहे से भरता है। वह तो सड़कों पर मटकती तितलियों को देख आंखें ठंडी कर लेता है पर तू किसकी इन्तजार में सूखती है! वह तो यार दोस्तों में शराब पीकर दिल तर कर लेता है और तू ...?

सोना से और नहीं सुना गया। उसने आगे बढ़कर बिन्दा के मुंह पर हाथ धर दिया—"बस बिन्दा बस! ऐसा न बोल। वह तेरा भाई है।" और सोना रो पड़ी। "भाई है तो क्या? भौजी, क्या उसके सारे कसूर माफ हैं! इंसाफ क्या कोई चीज़ नहीं है? क्यों लाया था वह तुझे यहां बांध कर? भौजी तू मुझे झांसा दे सकती है पर अपने मन को कब तक धोखा देगी?"

बिन्दा शहर में पति की संगत में रहती हुई बहुत कुछ सीख गई थी। राममोहन की दुकान पर तरह-तरह के लोग आते रहते थे। वह उनसे नई-नई बातों पर बातचीत करता रहता था। शहर में, देश में घटने वाली घटनाओं की वह पूरी जानकारी रखता था। घर पर वह बिन्दा को भी सब

बताता रहता था। इससे बिन्दा की सोचने समझने की ताकत बढ़ती जाती थी।

बिन्दा की बात सुनकर सोना ने धीरे से कहा "तू कहती तो ठीक है बहना। पर यह तो दोष अपने भाग का ही है। तुम जानो वह ठहरे दसवीं जमात पास। शहर के दफ्तर में नौकरी करत हैं। मुझ सी गंवार, जो घर में निठल्ली बैठी हो वह कैसे उन्हें खुश कर सकती है।"

भौजी ! तेरी दोनों बातें गलत हैं। तू अपने आप में ही मरी जा रही है। न तो तू गंवार है और न ही निठल्ली। ज़रा बता तो है कोई पूरे गांव भर में तुझ सी सलीके वाली बहू। तेरे विचार में जो लाज शरम न छोड़े वह गंवार हो गया ? और फिर सारा घर जो तूने संभाल रखा है सो निठल्ली कैसे हो गई। एक बात तो तुझे पता होनी ही चाहिए भौजी, कोई औरत अगर ठीक तरह से घर न संभाले तो मर्द बाहर कमाई कर ही नहीं सकता। कमाना जितना जरूरी है उसे संभालना और भी ज़रूरी है।

हां एक बात और बता दूं हर जगह का अपना-अपना चलन होता है और अपना अपना पहरावा होता है। जो शहर में है गांव में नहीं हो सकता। हम साफ सुथरे रहें ऊंच नीच को समझ-कर चलें यह हमारा कर्तव्य है। पर यह भी याद रख जिस ढंग से तू चल रही है एक दिन जरूर गंवार हो जाएगी। रात-रात भर रोना, बचा-खुचा खाना खाकर पड़ जाना, यह सब तेरे रूप और शरीर को खत्म कर देंगे। जिस दिन खटिया पर पड़ेगी कोई एक बूंद पानी देने वाला नहीं होगा तुझे। भौजी सबको काम प्यारा होता है चाम नहीं। सोना हैरान थी कि बिन्दा इतनी ढेर सी बातें कहां से सीख कर आई है। वह उसके मुंह को बिटर-

बिटर देखने लगी। उसके पास उसकी बात का कोई उत्तर नहीं था। फिर भी लाचार सी बोली—"बिन्दा तू नहीं समझेगी—मैं नहीं जानती ठीक क्या है और गलत क्या है। मैंने तो अपने घर में जो मां को करते देखा वही सीखा, और सुसराल में जो सास ने सिखाया वही किया है। मां-बापन ने पढ़ाया नहीं। शहर का सलीका नहीं सिखाया तो इसमें मेरा क्या दोष है। पर यह नफरत का बोझ मैं अब और नहीं उठा सकती बिन्दा—मैं नहीं जानती अब क्या करूं, और कहां जाऊं ? इतना कहते-कहते सोना रो पड़ी। □

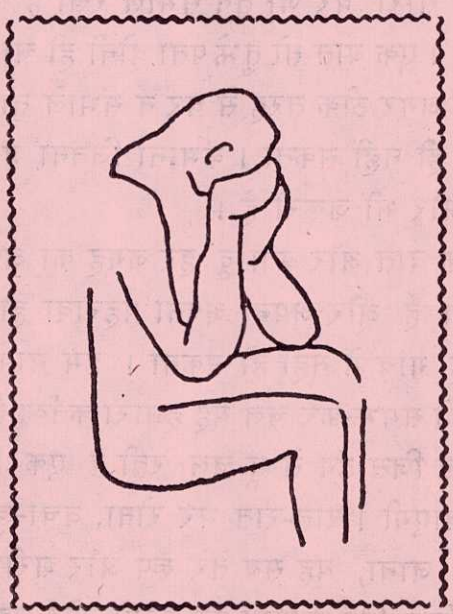

पांच

सोना के आंसू जो एक बार बहने शुरू हुए तो टप-टप गिरते ही गए। बिन्दा ने उसके दिल के जख्म को फिर से कुरेद दिया था। वह वहीं बैठी-बैठी अतीत की गहराइयों में उतरती चली गई।

गोपाल और उसकी शादी को तीन साल हो चुके थे। पर पति का प्यार क्या है यह उसने जाना ही न था। उसका पति चाहता था कि वह सुर्खी पाउडर लगाकर, सिर उघाड़े उसके साथ घूमे। शहर की तरह नए-नए नमूनों के कपड़े पहने। एक बार वह उसके लिए एक बिना बांह का जम्फर खरीद भी लाया था पर सोना उस कपड़े को शर्म के मारे आंख उठा कर देख भी न सकी थी। इस पर वह कितना बिगड़ा था यह उसे अच्छी तरह याद था।

सोना समझ ही नहीं पाती थी कि कैसे सास-ससुर के और गांव के बड़े-बूढ़ों के सामने निर्लज्ज बने। जो कुछ गांव की दूसरी बहुएं पहनती ओढ़ती थीं, वह भी वही पहनती थी। हां पढ़ाई का समय वह मां-बाप और अपनी गलती से खो चुकी थी। इसका उसे रंज था। सोना ने भी एक दो बार अब भी चाहा था कि गोपाल थोड़ा-सा वक्त निकाल कर अगर उसे कुछ पढ़ा-लिखा दिया करे तो वह भी कुछ सीख जाए। पर इसमें गोपाल को अपनी हेठी नज़र आती थी।

सोना समझ रही थी कि गोपाल के मन में उसके लिए कोई जगह नहीं रह गई है। सोना का रूप अगर उसे कभी उसके पास खींच भी लाता है तो वह अधिक देर टिक नहीं पाता। सोना सोचती क्या शहर में रहने वाले सभी ऐसे

होते हैं। पर बिन्दा का पति भी तो शहर में रहता था। वह तो उसे बहुत चाहता है। इसी उधेड़-बुन में न जाने कब तक वह डूबती-उबरती रही, पर पति की चाय के लिए आवाज़ सुन एक दम चौंककर उठ गई और उसने संभलकर इधर-उधर देखा और झटपट चूल्हा जलाने लगी।

इसी तरह रोते-हंसते दिन बीतते गए। आज सोना सुबह से ही उदास थी। सावन आ गया था। गांव की बहुएं अपने-अपने पीहर चली गयी थीं और बेटियां लौट आयी थीं। गांव में भी मेले की तैयारियां हो रही थीं। सावन का मेला गांव में बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था।

चूड़ियां बेचने वाले बंजारों ने गांव के बाहर डेरे डाल दिए थे। बैलों की दौड़ में हिस्सा लेने के लिए दूसरे गांवों से बैलों की जोड़ियां सज-धज कर आ रही थीं। गांव के गबरु-जवान कुश्ती की तैयारियों में जुटे थे। पेड़ों की डालों में झूले पड़

गए थे। मेंहदी किस तरीके से अधिक रचेगी इसके नए-नए तरीके सोचे जा रहे थे। कोई हरी मेंहदी पीस रही थी। तो कोई सूखी हाट से खरीद कर ला रही थी। कुएं की जगत पर हंसी ठट्ठे के बोल, झंकार की झंकार और हरी-लाल पीली चूड़ियों की खनकार बढ़ती जाती थी।

पिछली बार सोना भी बिन्दा के साथ मेला देखने गई थी। अबकी बिन्दा अभी आई नहीं थी। पर मन ही मन सोना चाहती थी इस बार वह पति के साथ मेला देखने जाए। उसने अपना सबसे बढ़िया जोड़ा उस दिन पहनने को निकाल लिया था। चोली के बट निकालने को उसने चुनरी के साथ ही उसे तकिए के नीचे दबा दिया था। कपड़ों के बट निकालने का वह यही तरीका जानती थी। पर उसे बिल्कुल उम्मीद नहीं थी कि उसका पति उसे मेला दिखाने ले जाएगा। गांव के मेले को तो वह गंवारों की नुमाइश कहा करता है, यह वह सुन चुकी थी। फिर भी वह क्यों आस लगाए थी, यह वह खुद नहीं जानती थी।

सोना को याद आने लगे सखियों के संग झूले गए सावन के झूले। रह-रहकर सावन के गीत उसके कानों में गूंजने लगे। झूला झूलतीं, हंसी ठट्ठा करतीं, सखियों के झुंड उसकी आंखों के आगे तैरने लगे। बार-बार उसके होंठ हिल-हिल उठते।

झूला डारो री सखी, सावन आयो झूम के
कारी बदरिया संग, नाचे मोरा मनुवा
नाचे मोरा मनुवा, चाहे मोरा मनुवा
थाम ले सजनवा, झुलवा की डोर रे
झूरा डारो सखी री, सावन आयो झूम के।

सोना के मन के सपनों की बढ़ती पेंग को अचानक डाकिए की आवाज़ ने थाम लिया। वह लपक कर बाहर आई। गांव में डाकिया चार छः दिन बाद ही आता था। पर उसका आना गांव में खुशी की एक लहर ला देता था। सोना के चेहरे पर भी खुशी छा गई। वह बाहर आकर किवाड़ की ओट में खड़ी हो गई और चिट्ठी लेने को हाथ आगे बढ़ा दिया। डाकिए ने जब उसे एक चिट्ठी थमायी तो उसने धीरे से कहा "डाकिया ताऊ जरा बांच दो महां की चिट्ठी है।"

"मेरे धोरे बांचने का वखत नाही बहू—हां इतना बताए देत हूं कि यह कारड शामपुर गांव ते आयो है। तोर भैया तोहे लेन कूं आए रहयो है।"

शामपुर का नाम सुनते ही सोना की आंखों में खुशी के आंसू आ गए। वह जान गई उसका भैया उसे सावन की तीज खातिर लेन आ रहा है। फिर भी वह पूरी चिट्ठी पढ़वाना चाहती थी। गोपाल के आने में अभी देर थी। उसने कार्ड उठाकर ताक पर रख दिया। और वह खुशी-खुशी घर का काम निपटाने लगी। चिट्ठी मिलते ही उसका मन शामपुर पहुंच गया था। वह सोच रही थी कनिया, रज़िया भी जरूर अब तक सुसराल से लौट आई होंगी। उसके लगाए आम के पेड़ पर तो बौर भी आ गए होंगे। अब की वह झूला उसी की डाली में डालेगी। खूब मज़ा रहेगा। उसके दोनों भतीजे कितने बड़े और शैतान हो गए होंगे और फिर उसकी पाली गाय की बछिया भी तो जवान हो चुकी होगी। जरूर वह अपनी मां से भी बढ़कर दूध देगी, सोचते ही उसके होंठ हंसी से खिल उठे।

शाम को गोपाल को घर में घुसते देख वह झट से

चिट्ठी उठा लाई। उसका भैया उसे लेने आ रहा है, इसकी खबर वह सबसे पहले अपने पति को ही देना चाहती थी। दिल के एक कोने में डर भी था कि कहीं वह उसे जाने से मना ही न कर दे। दूसरी ओर छिपी सी आस यह भी थी कि शायद उसके जाने की बात सुन उसका पति उसे कहे "सोना तेरे बिना मेरा दिल नहीं लगेगा।" या कहे "चली तो जा सोना! पर जल्दी लौट आना।"

लेकिन इनमें से कुछ भी नहीं हुआ। चिट्ठी देखते ही गोपाल का पारा सातवें आसमान को जा पहुचा। पत्र एक ओर फेंक कर वह बोला "मैं क्या तेरे बाप का नौकर हूं' जो तेरी चिट्ठियां पढ़ता फिरूं। जा बचवा ले उसी से जिसने लिखा है। घर में घुसा नहीं कि आगई बेगार उठा कर और वह दफ्तर के कपड़े उतारने लगा।

सोना की सारी खुशी गायब हो गई। पर आज उसकी आंखों में आंसू नहीं आए। आज उसने शायद पहली बार भरपूर नज़र उठा कर पति को देखा। जैसे जांच रही हो कि ज़रा सी चिट्ठी पढ़ने में उसे कितनी तकलीफ होने वाली है। पर सोना की आंख से आंख मिलते ही गोपाल की नज़रें झुक गईं जैसे कुछ गुनाह करते पकड़ा गया हो। सोना ने मन ही मन कुछ सोचा एक बार फिर पति की ओर नज़र भरकर देखा और चिट्ठी उठा कर चल दी वहां से। गोपाल उसे जाते देखता रह गया। उसे आशा नहीं थी कि सोना ऐसे चली जाएगी। उसने सोचा था, वह रोएगी, मिन्नत खुशामद करेगी तो वह बड़ा ऐहसान जता कर पढ़ देगा चिट्ठी। वैसे वह खुद भी यह पढ़ने के लिए बड़ा उतावला था कि चिट्ठी में क्या लिखा है। पर सोना जो एक बार गई तो पीछे घूमकर भी नहीं देखा।

छः

पति के पास से तो सोना चुपचाप चली गई पर भीतर जाकर वह अपने को संभाल नहीं पाई। अपनी मजबूरी पर वह फूट-फूट कर रोने लगी। आज अनपढ़ता शराप बनकर उसके सामने आ गई। एक मामूली-सी चिट्ठी पढ़वाने के

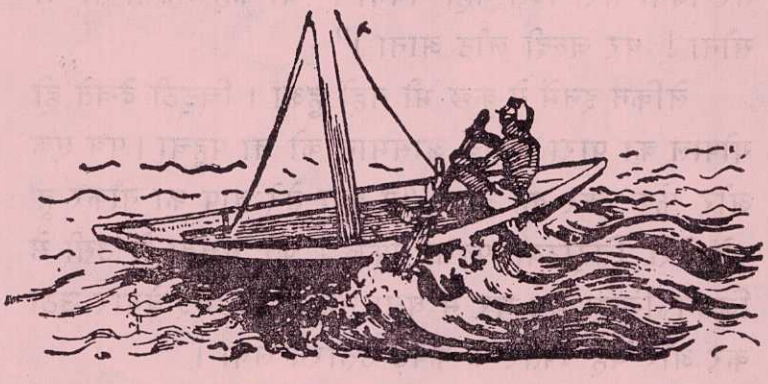

लिए उसे अपने ही पति की खुशामद करनी होगी। यह उससे सहा नहीं जा रहा था। उसे अपने पर ही गुस्सा आने लगा। क्यों वह इतनी मोहताज होकर रह गई, क्यों नहीं उसने अपने को संभाला, तीन साल में अगर वह थोड़ा-थोड़ा भी पढ़ती तो क्या आज वह चिट्ठी भी न पढ़ सकती।

पूरे तीन साल उसने पति के मुंह की ओर देखते-देखते बिता दिए। उसकी इन्तज़ार में अपनी आंखें बिछाकर रातें गुज़ारती रही। पर मिला क्या ? न घर की रही न घाट की। कमी क्या थी मुझमें 'चार आंखों की और फैशन की।'

सोना इससे अधिक नहीं सोच सकी। उसने सोच लिया कि अब उसे कुछ करना ही होगा। अब वह वक्त को हाथ से नहीं जाने देगी। बहते हुए आंसुओं को पोंछ डाला उसने और हाथ मुंह धोकर जाने की तैयारी में लग गई।

सोना ने अपने सास-समुर से पूछा और भाई के साथ पीहर चली गई। इस बार वह एक इरादा मन में लेकर ही चली सुसराल से। जाते-जाते उसके अंदर कहीं विद्रोह की एक . . . . एक टीस सी उठी। पर उसे, उसने बड़े जतन से दबा दिया।

घर पहुंच कर सब से पहले उसने सारे काम-धंधे का बोझ अपने ऊपर ले लिया। वह जानती थी कि मेहमान

बन कर वह अधिक दिन नहीं टिक सकेगी और उसे अभी कुछ दिन वहीं रहना था। वह सुबह मुंह अन्धेरे उठ जाती घर के कहार की मदद से ढोरों का चारा पानी कर देती।

ढोरों के बांधने की जगह साफ करवा कर गोबर भी ठिकाने लगवा देती। भाभी के उठते ही छोटे बच्चे को उठा लेती और भाभी से कहती, भौजी तुम भाई के लिए कलेवा बना दो मैं बच्चों को संभाल लूंगी और बाहर का काम भी देख लेती हूं।"

जब तक भाभी खाने पीने का प्रबन्ध करती वह तब तक बच्चों को नहला-धुला कर कपड़े पहना देती। इससे सोना की भाभी को तो आराम मिलता ही था बच्चे भी बड़े चुस्त और खुश नज़र आने लगे। सारा दिन वह बुआ के आगे पीछे घूमने लगे। नतीजा यह हुआ कि सोना के लिए जब सुसराल से बुलावा आया तो उसकी भाभी ने कहलवा दिया कि सोना को कुछ दिन रुक कर ही भेजा जाएगा। सोना ने सुख की सांस ली और भीतर जाकर आंख के कोने में आए आंसुओं को धीरे से पोंछ डाला।

इस बीच सोना ने अपना रास्ता खोज निकाला। सोना के गांव में पांचवीं कक्षा तक का एक स्कूल था। उस में पढ़ाने वाली एक मास्टरनी उनके घर के पिछवाड़े ही रहती थी। सोना उसे बहिन जी कहती थी। शादी से पहले भी दोनों

में 'राम-राम' थी। अब की सोना बहिन जी से बहनापा जोड़ना चाहती थी। पर मन ही मन डरती भी थी कि बहिनजी उसके साथ मेल जोल रखना भी चाहेंगी या नहीं। कई दिन तक वह यही सोचती रही। एक दिन जब उसकी मां और भाभी सो गईं तो जी कड़ा करके वह उठी, मां का बनाया सत्तू उसने एक कटोरे में डाला और बहिन जी के घर की ओर चल दी।

सोना की हैरानी का ठिकाना न रहा जब सोना को देखते ही बहिन जी ने बड़े प्यार से अन्दर ले जाकर बैठाया। घर का सब हाल-चाल पूछा। पति, सास और ससुर का हाल-चाल पूछा। फिर तो सोना का हौसला बढ़ गया और जब

कभी भी वह घर के काम-काज से खाली होती या दोपहर को जब उसकी मां और भाभी सो जातीं तो वह बहिन जी के पास जा पहुंचती।

धीरे-धीरे दोनों में मेल बढ़ने लगा। एक दिन सोना ने डरते-डरते अपने मन की उलझन बहिन जी के सामने रखी तो

उन्होंने उसकी पीठ पर हाथ रखकर बड़े प्यार से कहा, "घबराओ नहीं सोना सब ठीक हो जाएगा। गोपाल रास्ते से भटक गया है। तुम्हें उसकी नज़रों को मोड़ कर सही रास्ता दिखाना होगा और इसके लिए पहले तुम्हें अपने को तैयार करना होगा। मैं तुम्हारे साथ हूं।"

बहिन जी की बात सुनकर सोना का उत्साह बढ़ गया और उनके कहने पर सोना नित्य-प्रति बहिन जी के पास आने लगी। बहिन जी स्कूल से बच्चों की पुरानी किताबें ले आतीं और उन्हीं से सोना को पढ़ने में बढ़ावा देने लगीं सोना के मन में तो एक धुन पहले से ही थी। बहिन जी की मदद से उसकी लगन बढ़ती गई। पढ़ने के साथ-साथ बहिन जी के हाथ में जो भी काम होता सोना सीखने की कोशिश करती।

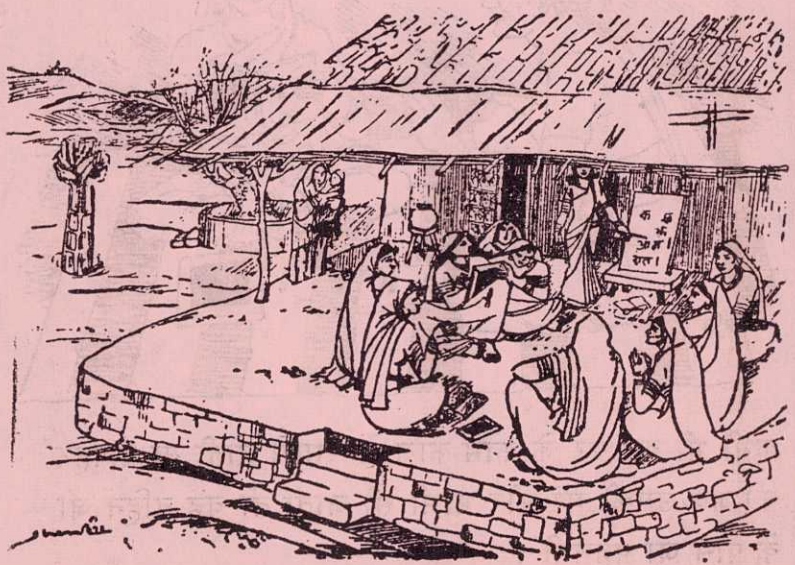

सोना इतने दिन से पीहर में है—इस बात को लेकर गांव की औरतें हैरान होतीं। पर सोना का बर्ताव कभी भी

उन्हें मुंह खोल कर कुछ कहने न देता। सभी के साथ उस ने चाची, भाभी, ताई का नाता जोड़ रखा था। सब के बच्चों को प्यार से दुलार देती। किसी के लिए कुरता सिल देती तो किसी का पाजामा। पढ़ना भी वह इतना सीख गई कि सत्यनारायण की कथा बांचने को उसी को बुलावा भेजा जाता। सोना सारे गांव की बेटी बन कर आगे बढ़ने लगी। □

सात

उधर गोपाल की हालत बिगड़ती गई। सोना के रहते उसे हमेशा लगता था जैसे उसे किसी ने अनजाने ही बांध रखा हो। उसे वह एक बोझ सा समझ कर ही झेल रहा था। सोना के जाते ही उसने सुख की सांस ली। सोचा चलो कुछ दिन तो मौज से काटने को मिलेंगे। मां-बाप तो पहले ही उसे कुछ नहीं कह पाते थे।

अब गोपाल सुबह ही घर से निकल जाता और रात को कभी लौटता कभी नहीं भी लौटता। यार लोगों की बैठकें जमने लगीं। महफिल शुरू होती, सिगरेट के कशों से और खत्म होती शराब के कड़वे घूंटों से।

दफ्तर से उठते ही प्रोग्राम बना लिया जाता। बड़े प्यार से गोपाल की जेब साफ की जाती। गोपाल को भी मज़ा आता जब वह अपने को चारों ओर से कई कई दोस्तों से घिरा पाता। वह अपने आप को टोली का हीरो मानने लगा। उसके दोस्त उसके इस नशे को बनाए रखना चाहते

थे। वे उसकी वाह-वाह करते। तारीफों के पुल बांधते और अपनी जीभ को तर करते रहते।

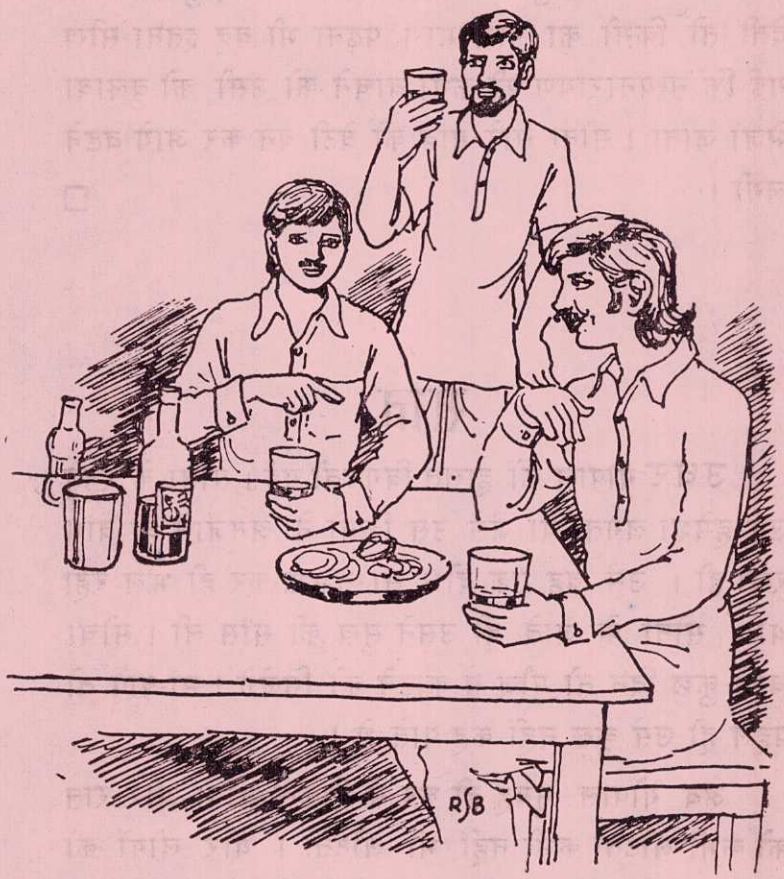

पर यह महफिलें अधिक दिनों तक नहीं जम सकीं। गोपाल की जेब महीने की ७-८ तारीख तक ही खाली हो जाती और उसे बापू से पैसे मांगते हुए शर्म आती थी। नतीजा यह हुआ कि जेब खाली होते ही दोस्त लोग किनारा कर जाते। रेगिस्तान को देखकर बादल भी तो अपना मुंह दूसरी ओर मोड़ लेते हैं।

गोपाल ने सोना की कमी का इलाज भी शहरी लड़कियों में ढूंढना चाहा। पर किसी ने उसे घास न डाली। दोस्तों की तरह वह भी उसके पास बैठ कर चांट-पकौड़ी खातीं, तोहफे लेतीं और अगूंठा दिखा कर चल देतीं। गोपाल खाली जेब पर हाथ रख, उनको जाते देखता का देखता ही रह जाता। यह सब देख, उसकी मंडली के लोग ही उसका मज़ाक उड़ाते। इससे गोपाल खीझ उठता। बाहर की खीज उसे घर से दूर खींचती गई। धीरे-धीरे घर और गोपाल की दूरी बढ़ती गई।

आजकल उसे रह-रह कर सोना की याद आने लगी। सोना का उसकी इन्तजार में रात-रात भर दहलीज़ में बैठ कर काटना, उसकी एक-एक चीज़ पूरी करने के लिए उसके आगे पीछे घूमना और बदले में उसका अपना व्यवहार उसे अन्दर तक साल रहा था। वह मन ही मन सोना का उन छोकरियों से मिलान करता। पर कहीं भी पटरी बैठती नज़र न आती। जब भी वह सोचता कि सोना में कमी क्या थी ? उसने उसे क्यों सताया ? तो उसका जी बुरी तरह कचोटने लगता। वह चुपचाप रहने लगा। जब भी घर आता एक अजीब सी उदासी उसे घेरने लगती। उसे ऐसा लगता जैसे कहीं से कुछ कट कर गिर गया हो, कुछ खो गया हो। जितना वह सोना को भूलना चाहता सोना उतनी तेज़ी से उसे याद आने लगी। घर के कौने-कौने में उसे सोना की परछाईं नज़र आती। हर चीज़ पर उसके हाथों की छाप नज़र आती। सोना की मोटी-मोटी आंखें हरदम उसका पीछा करती रहतीं। वह लाख कोशिश करता पर सोना की चुभती चोर नज़र से बच न पाता। कभी-कभी वह बुरी तरह चौंक उठता। उसे लगता सोना

छोटा सा घूंघट निकाले उसके पीछे-पीछे चली आ रही है। उसके पैरों की पायल की आवाज़ उसे साफ सुनाई देने लगती। कई बार तो वह रात को भी चौंक कर उठ बैठता। उसे लगता सोना सिसकियां भर-भर कर रो रही है। वह कान लगाकर सुनने की कोशिश करता और फिर अपनी बेवकूफी पर खुद ही झुंझला उठता।

एक दिन तो हद हो गई। रात को गोपाल को प्यास लगी। पलंग के नीचे उसने पानी का गिलास उठाने के लिए हाथ मारा [क्योंकि सोना हमेशा पानी का गिलास पलंग के नीचे रखा करती थी] उसे अपनी जगह पानी नहीं मिला तो वह एकदम चिल्ला उठा। "साली का नखरा तो देखो, आज पानी तक नहीं रखा इसने। समझा क्या है इसने अपने आप को"। और पास ही पड़े खाली गिलास को ठोकर मार कर गिरा दिया।

गिलास के गिरने की आवाज़ और गोपाल के चिल्लाने की आवाज़ को सुनकर गोपाल की अम्मा जाग गई। जब उसने गोपाल से पूछा कि किस पर बिगड़ रहे थे ? तो वह शर्म से पानी-पानी हो गया। वह मां के सामने आंख नहीं उठा सका। "कुछ नहीं मां" कह कर वह सो तो गया पर यह भी जान गया कि सोना जिसे लोगों के सामने मुंह खोल अपनी पत्नी भी नहीं कहता था, उसके मन के इतने नज़दीक भी है। कभी-कभी वह चाहता कि बापू से कहे कि सोना को बुलवा लो या वह खुद ही जाकर उससे मिल आए पर मुंह खोलने में उसे अपनी हेठी नज़र आती और वह चुप लगा जाता।

मां और बापू, बेटे की हालत से परेशान होते जा रहे थे। इन हालातों में वह बहू को भी नहीं बुलाना चाहते थे।

दोनों के सम्बन्ध वह अच्छी तरह जानते थे। बेटे की चिंता अब रामधन को खेत पर भी अच्छी तरह काम न करने देती, वह जल्दी ही थक जाता ऐसी दशा में खेत की उपज में कमी आने लगी। कभी-कभी रामधन सोचता कितना अच्छा होता अगर वह गोपाल से नौकरी न करवाता एक ट्रैक्टर खरीद कर उसे गांव में ही बांध देता। पर 'अब पछताए क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत।' तीर हाथ से निकल चुका था। गोपाल की उदासी और चिड़चिड़ेपन को देख कर दोनों पति पत्नी ठंडी आहें भरते। गोपाल का खान-पान बिगड़ने से उसकी सेहत गिरती जा रही थी। रामधन को घर की बरबादी सामने खड़ी दिखाई देने लगी। दिन बीतते गए और घर की हालत बिगड़ती गई।

आठ

उधर सोना के पास भी गांव की उड़ती खबरें पहुंचती रहती थीं। कभी-कभी उसका मन डोल उठता था और वह सोचती जल्दी ही वह घर लौट जाए। उसे अपने सास-ससुर की दशा पर तरस आता। वह सोचती वह बूढ़ा-बूढ़ी बेचारे दुःख में हैं। बुढ़ापे में न बेटे ने सहारा दिया न बहू ने। पर दूसरे ही क्षण उसका इरादा उसके सामने आ जाता और वह अपना जी कड़ा कर लेती। अचानक एक दिन उसे बिन्दा का पत्र मिला। लिखा था गोपाल बीमार है और अस्पताल में पड़ा है। बापू के कहने से ही उसने पत्र लिखा था। उसने यह भी लिखा था कि गोपाल बोलता

बहुत कम है। कभी-कभी आंखे पोछता है पर पूछने पर बताता कुछ नहीं।

चिट्ठी पढ़ कर सोना का मन कचोटने लगा। उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। बात यहां तक बढ़ जाएगी यह उसने कभी सोचा भी नहीं था। वह बिना किसी को कुछ कहे चिट्ठी उठा कर बहिन जी के पास जा पहुंची। चिट्ठी बहिन जी के हाथ पर रख, दहाड़ मार कर रोने लगी। सोना को उस तरह रोते देख बहिन जी पहले तो हैरान रह गईं पर चिट्ठी पढ़ कर बहिन जी समझ पाईं कि अब सोना को नहीं रोका जा सकेगा। गोपाल की हालत क्यों ऐसी हुई और अस्पताल वह कैसे पहुंच गया यह भी वह अच्छी तरह समझ गईं। उन्होंने सोचा अब समय आ गया है कि सोना को उसके उचित स्थान पर पहुंचा दिया जाए। फिर भी उसका मन टटोलने की खातिर बोली "सोना तेरे आंसू बता रहे हैं कि तू पति के पास जाना चाहती है। हम भी यह चाहते हैं सोना कि तू अपने पति, सास और ससुर की सेवा करे और उनकी प्यारी बने पर सोच जिस आदमी ने आज तक तुझे कुछ दिया ही नहीं उसकी फिकर में तू क्यों मरने लगी है। शहर में डाक्टर हैं, नर्स हैं और दवाइयां हैं। सब ठीक हो जाएगा। तू कोई डाक्टर तो है नहीं जो उसे ठीक कर लेगी।

नहीं बहिन जी नहीं आप यह नहीं कहो। डाक्टर नर्स कुछ नहीं कर सकते। मैं जानती हूं वह क्यों बीमार पड़े हैं। वह दिल के बुरे नहीं बहिन जी बस ज़रा रास्ते से भटक गए थे। शहर की रंगीनियों में खो गए थे और फिर मैं भी तो वक्त पर उन्हें संभाल नहीं पाई। यहां देने पाने

का तो प्रश्न ही नहीं बहिन जी आपने ही तो बताया था कि पाने के लिए पहले देना बहुत जरूरी होता है।"

"पर तू तो देती ही आई है सोना। तेरे अपने भी तो कुछ अधिकार हैं"—बहिन जी ने उसे और कुरेदना चाहा।"

"अधिकार कभी माँगे नहीं जाते बहिन जी। वह तो कुदरत ने हमें पहले ही दे रक्खे हैं। उन्हें सम्भालना और इस्तेमाल करना मुझे आता नहीं था। इसीलिए हारी। सोना ने वकील की तरह बहस करते हुए कहा। अब तो मैं आपकी कृपा से अधिकार और कर्तव्य के असली सम्बन्ध को समझ चुकी हूं। आप तो मुझे केवल यह आशीर्वाद दें कि मैं अपना कर्त्तव्य निभा सकूं। अधिकार तो अपने आप मेरे पीछे फिरेंगे।

सोना के विचार सुन बहिन जी मन ही मन खुश हो रही थीं। वह जान गई थीं कि सोना हर बात का तर्क देना सीख गई है।

वह सोना को लेकर उसके बापू के पास गई। पति के पास जाने को लेकर जो बात सोना नहीं कर सकी वह हंसते हुए बहिन जी ने उन्हें समझा दी।

गोपाल की बीमारी की बात सुन पहले तो घर के सभी लोग घबरा गये। सोना की मां तो रोने लगी। सोना का भाई उसके साथ जाने को तैयार हो गया। पर सोना किसी को भी साथ ले जाने के लिए तैयार नहीं थी। उसने भाई से बड़े प्यार से कहा, "भैया, अब तेरी बहिना पहले की छुई-मुई सोना नहीं रही। अब तो बहिन जी की कृपा से वह शहर तो क्या विदेश में भी जा सकने की हिम्मत रखती है। तुम मेरी बिल्कुल चिन्ता मत करो। पहुंचते ही चिट्ठी डालूंगी अगर तुम्हारी जरूरत पड़ी तो फौरन बुलवा लूंगी।

सोना की ज़िद के आगे किसी की एक न चली। बहिन जी की मदद से सोना के जाने की तैयारी कर दी गई। बहिन जी ने सोना के भाई से कह बिन्दा के पति के नाम तार करवा दिया कि वह उसे स्टेशन पर आकर ले ले।

सोना सबसे गले मिली और तांगे में जा बैठी। गांव की सभी आंखें तांगे के आस पास जमा थीं। सभी की आंखें आंसुओं से भरी हुई थी। सभी को आज ऐसा लग रहा था जैसे उनकी अपनी बेटी ही विदा हो रही हो।

सोना का भाई और बहिन जी दोनों सोना को स्टेशन से गाड़ी में बिठाने साथ गए। सोना के पीहर से शहर तक गाड़ी में तीन घण्टे लगते थे। पर यह तीन घण्टे काटने सोना के लिए पहाड़ से लगने लगे। वह चाह रही थी कि चिड़िया सी उड़कर पति के पास पहुंच जाए। तरह-तरह के विचार उसकी घबराहट को बढ़ाते जा रहे थे। मन ही मन उसने पति के ठीक हो जाने की न जाने कितनी मनौतियां मान लीं।

किसी तरह गाड़ी स्टेशन पर पहुंची। सोना ने दूर से ही

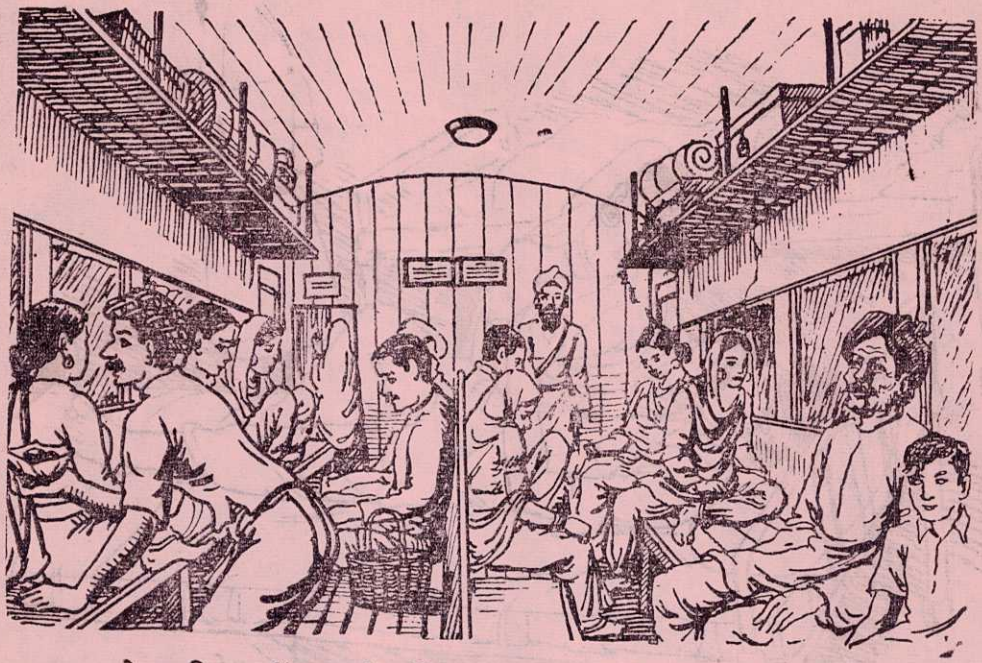

देख लिया बिंदा और बिंदा का पति दोनों स्टेशन पर खड़े हैं। गाड़ी रुकते ही वह भाग कर नीचे उतर आई। सोना की उतावली देख बिन्दा का पति हंस दिया और आगे बढ़ कर सामान उतारने लगा। पर बिन्दा को देखते ही सोना की आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे। वह रोती जाती और पूछती जाती।

"क्या हुआ उन्हें ? कैसे बीमार पड़े ? तूने पहले क्यों नहीं खबर दी ? मां कैसी है ? कहां है ? किस डाक्टर को दिखाया है ? उसने बीमारी क्या बताई है ?" अपनी धुन में यह भी ध्यान नहीं रहा कि बिन्दा ने तो उसके एक प्रश्न का भी उत्तर नहीं दिया। पुरानी याद आते ही उसने बिन्दा का हाथ पकड़कर झकझोर दिया।" और कुछ ज़ोर से बोली, "तू बोलती क्यों नहीं बिन्दा"

बिन्दा हैरान थी क्या यह वही सोना भौजी है।

उसने हंस कर कहा "भौजी अब तो सबसे बड़ा डाक्टर आ पहुंचा है। वह खुद ही देखकर बता देगा कि भाई को क्या बीमारी है। पीछे से बिन्दा के पति की भी हंसी सुन, सोना कानों तक लाल हो गई।

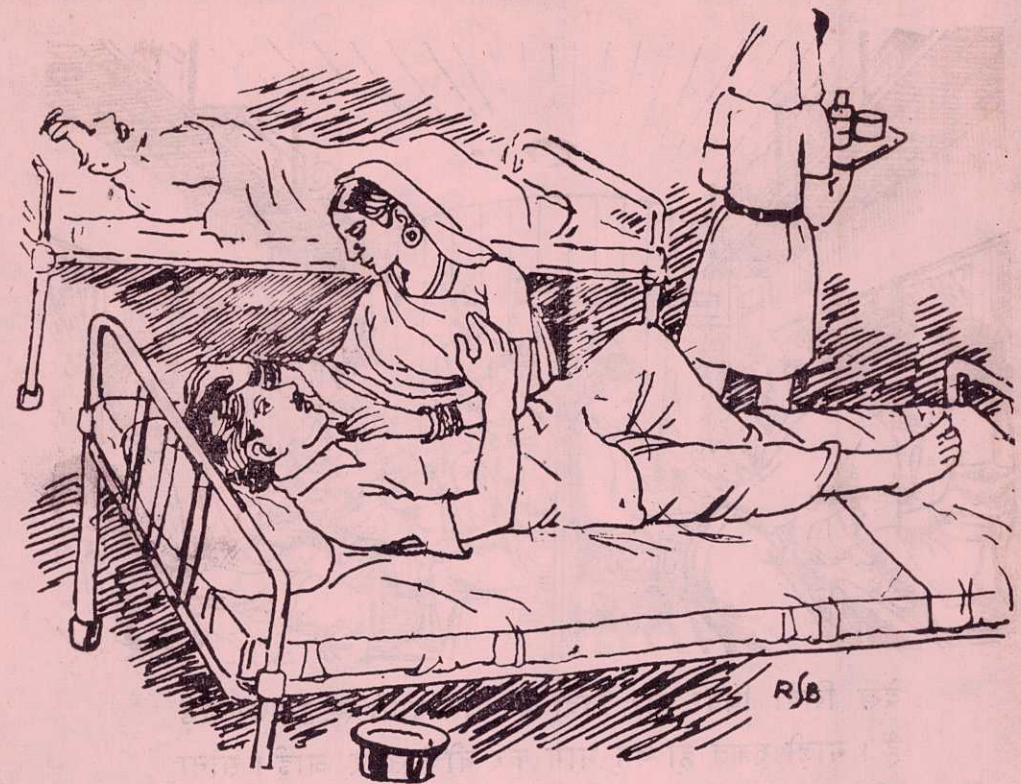

अस्पताल पहुंचते ही सब से पहले सोना को खींचती हुई बिन्दा अन्दर भागी। सोना ने देखा गोपाल आंखें बन्द किए पलंग पर लेटा है। बहुत कमज़ोर हो गया है। आंखें अन्दर घुस गई हैं। सोना ने अपनी रुलाई रोकने के लिए मुंह में कपड़ा दे लिया। बिन्दा की आवाज़ से गोपाल ने धीरे से आंखें खोलीं और सामने आखों में आंसू लिए सोना को खड़ी देख, हैरान रह गया।

बिन्दा ने गोपाल को आंखें खोलते देख हंस कर कहा—"भाई देख किसे खींच लाई हूं ···· पहचानते हो ?

गोपाल ने कुछ नहीं सुना। धीरे से बोला ···· सोना और उसकी आंखों से आंसू टपकने लगे।

सोना अपने को नहीं रोक सकी वह धीरे से पति का आगे बड़ा हाथ पकड़ वहीं उसके पास बैठ गई। दूर कहीं रेडियो पर गीत गूंज उठा—

मितवा रे—
काहे भूल गयो हमारो देश
मितवा रे—

और दोनों के बहते आंसू फूलों की तरह मुस्करा उठे।

□ □ □